

# टोबा टेक सिंह

## स्टोरीलाइन

इस कहानी में प्रवासन की पीड़ा को विषय बनाया गया है। देश विभाजन के बाद जहां हर चीज़ का आदान-प्रदान हो रहा था वहीं कैदीयों और पागलों को भी स्थानान्तरित करने की योजना बनाई गई। फ़ज़लदीन पागल को सिर्फ़ इस बात से सरोकार है कि उसे उसकी जगह 'टोबा टेक सिंह' से जुदा न किया जाये। वो जगह चाहे हिन्दुस्तान में हो या पाकिस्तान में। जब उसे जबरन वहां से निकालने की कोशिश की जाती है तो वह एक ऐसी जगह जम कर खड़ा हो जाता है जो न हिन्दुस्तान का हिस्सा है और न पाकिस्तान का और उसी जगह पर एक ऊँची चीख़ के साथ औंधे मुँह गिर कर मर जाता है।

बटवारे के दो-तीन साल बाद पाकिस्तान और हिंदोस्तान की हुकूमतों को ख़्याल आया कि अख़लाक़ी कैदीयों की तरह पागलों का तबादला भी होना चाहिए यानी जो मुसलमान पागल, हिंदोस्तान के पागलख़ानों में हैं उन्हें पाकिस्तान पहुंचा दिया जाये और जो हिंदू और सिख, पाकिस्तान के पागलख़ानों में हैं उन्हें हिंदोस्तान के हवाले कर दिया जाये।

मालूम नहीं ये बात माकूल थी या ग़ैरमाकूल, बहरहाल दानिशमंदों के फ़ैसले के मुताबिक़ इधर उधर ऊंची सतह की कांफ्रेंसें हुईं और बिलआख़िर एक दिन पागलों के तबादले के लिए मुक़र्रर हो गया। अच्छी तरह छानबीन की गई। वो मुसलमान पागल जिनके लवाहिक़ीन हिंदोस्तान ही में थे, वहीं रहने दिए गए थे। जो बाक़ी थे, उनको सरहद पर रवाना कर दिया गया।

यहां पाकिस्तान में चूँकि क़रीब-क़रीब तमाम हिंदू-सिख जा चुके थे इसीलिए किसी को रखने रखाने का सवाल ही न पैदा हुआ। जितने हिंदू-सिख पागल थे सबके सब पुलिस की हिफ़ाज़त में बॉर्डर पर पहुंचा दिए गए।

उधर का मालूम नहीं, लेकिन इधर लाहौर के पागलखाने में जब इस तबादले की ख़बर पहुंची तो बड़ी दिलचस्प चेमिगोईयां होने लगीं। एक मुसलमान पागल जो बारह बरस से हर रोज़ बाक़ायदगी के साथ 'ज़मींदार' पढ़ता था, उससे जब उसके एक दोस्त ने पूछा, "मौलबी साब!

ये पाकिस्तान क्या होता है?" तो उसने बड़े गौर-ओ-फ़िक्र के बाद जवाब दिया, "हिंदोस्तान में एक ऐसी जगह है जहां उस्तरे बनते हैं।" ये जवाब सुन कर उसका दोस्त मुतमइन हो गया।

इसी तरह एक सिख पागल ने एक दूसरे सिख पागल से पूछ, "सरदार जी हमें हिंदोस्तान क्यों भेजा जा रहा है... हमें तो वहां की बोली नहीं आती।"

दूसरा मुस्कुराया, "मुझे तो हिंदोस्तोड़ों की बोली आती है... हिंदोस्तानी बड़े शैतानी, अकड़-अकड़ फिरते हैं।"

एक दिन नहाते नहाते एक मुसलमान पागल ने पाकिस्तान ज़िंदाबाद का नारा इस ज़ोर से बुलंद किया कि फ़र्श पर फिसल कर गिरा और बेहोश हो गया।

बा'ज़ पागल ऐसे भी थे जो पागल नहीं थे। उनमें अक्सरियत ऐसे क्रांतिलों की थी जिनके रिश्तेदारों ने अफ़सरों को दे दिला कर, पागलखाने भिजवा दिया था कि फांसी के फंदे से बच जाएं। ये कुछ कुछ समझते थे कि हिंदोस्तान क्यों तक्सीम हुआ है और ये पाकिस्तान क्या है। लेकिन सही वाक़ियात से वो भी बेख़बर थे।

अख़बारों से कुछ पता नहीं चलता था और पहरदार सिपाही अनपढ़ और जाहिल थे। उनकी गुफ़्तगूओं से भी वो कोई नतीजा बरामद नहीं कर सकते थे। उनको सिर्फ़ इतना मालूम था कि एक आदमी मोहम्मद अली जिन्ना है जिसको क़ाइद-ए-आज़म कहते हैं। उसने मुसलमानों के लिए एक अलाहिदा मुल्क बनाया है जिसका नाम पाकिस्तान है... ये कहाँ है, उसका महल-ए-वकूअ क्या है, उसके मुतअल्लिक वो कुछ नहीं जानते थे।

यही वजह है कि पागलखाने में वो सब पागल जिनका दिमाग़ पूरी तरह माऊफ़ नहीं हुआ था, इस मुखसमे में गिरफ़्तार थे कि वो पाकिस्तान में हैं या हिंदोस्तान में... अगर हिंदोस्तान में हैं तो पाकिस्तान कहाँ है!

अगर वो पाकिस्तान में हैं तो ये कैसे हो सकता है कि वो कुछ अर्से पहले यहीं रहते हुए भी हिंदोस्तान में थे!

एक पागल तो पाकिस्तान और हिंदोस्तान और हिंदोस्तान और पाकिस्तान के चक्कर में कुछ ऐसा गिरफ़्तार हुआ कि और ज़्यादा पागल हो गया, झाड़ू देते एक दिन दरख़्त पर चढ़ गया और टहनी पर बैठ कर दो घंटे मुसलसल तक्ररीर करता रहा जो पाकिस्तान और हिंदोस्तान के नाजूक मसले पर थी।

सिपाहियों ने उसे नीचे उतरने को कहा तो वो और ऊपर चढ़ गया। डराया धमकाया गया तो उसने कहा, “मैं हिंदोस्तान में रहना चाहता हूँ न पाकिस्तान में... मैं इस दरख्त पर ही रहूँगा।”

बड़ी मुश्किलों के बाद जब उसका दौरा सर्द पड़ा तो वो नीचे उतरा और अपने हिंदू-सिख दोस्तों से गले मिल मिल कर रोने लगा। इस खयाल से उसका दिल भर आया था कि वो उसे छोड़ कर हिंदोस्तान चले जाएंगे।

एक एम.एससी. पास रेडियो इंजिनियर में जो मुसलमान था और दूसरे पागलों से बिल्कुल अलग थलग, बाग़ की एक खास रविश पर, सारा दिन खामोश टहलता रहता था, ये तब्दीली नुमूदार हुई कि उसने तमाम कपड़े उतार कर दफ़्तर के हवाले कर दिए और नंग-धड़ंग सारे बाग़ में चलना फिरना शुरू कर दिया।

चैनयूट के एक मोटे मुसलमान पागल ने जो मुस्लिम लीग का सरगर्म कारकुन रह चुका था और दिन में पंद्रह सौ मर्तबा नहाया करता था, यकलख्त ये आदत तर्क कर दी। उसका नाम मोहम्मद अली था। चुनांचे उसने एक दिन अपने जंगले में ऐलान कर दिया कि वो क़ाइद-ए-आज़म मोहम्मद अली जिन्ना है। उसकी देखा देखी एक सिख पागल मास्टर तारा सिंह बन गया। क़रीब था कि इस जंगले में खूनख़राबा हो जाये मगर दोनों को ख़तरनाक पागल क़रार दे कर अलाहिदा अलाहिदा बंद कर दिया गया।

लाहौर का एक नौजवान हिंदू वकील था जो मोहब्बत में नाकाम हो कर पागल हो गया था। जब उसने सुना कि अमृतसर हिंदोस्तान में चला गया है तो उसे बहुत दुख हुआ। उसी शहर की एक हिंदू लड़की से उसे मोहब्बत हुई थी। गो उसने उस वकील को ठुकरा दिया था, मगर दीवानगी की हालत में भी वो उसको नहीं भूला था। चुनांचे वो उन तमाम हिंदू और मुस्लिम लीडरों को गालियां देता था जिन्होंने मिल मिला कर हिंदोस्तान के दो टुकड़े कर दिए, उसकी महबूबा हिंदुस्तानी बन गई और वो पाकिस्तानी।

जब तबादले की बात शुरू हुई तो वकील को कई पागलों ने समझाया कि वो दिल बुरा न करे, उसको हिंदोस्तान भेज दिया जाएगा। उस हिंदोस्तान में जहां उसकी महबूबा रहती है। मगर वो लाहौर छोड़ना नहीं चाहता था इसलिए कि उसका खयाल था कि अमृतसर में उसकी प्रैक्टिस नहीं चलेगी।

यूरोपियन वार्ड में ऐंगलो इंडियन पागल थे। उनको जब मालूम हुआ कि हिंदोस्तान को आज़ाद कर के अंग्रेज़ चले गए हैं तो उनको बहुत सदमा हुआ। वो छुपछुप कर घंटों आपस में इस

अहम मसले पर गुफ्तुगू करते रहते कि पागलखाने में अब उनकी हैसियत किस क्रिस्म की होगी। यूरोपियन वार्ड रहेगा या उड़ा दिया जाएगा। ब्रेकफास्ट मिला करेगा या नहीं। क्या उन्हें डबल रोटी के बजाय ब्लडी इंडियन चपाती तो ज़हर मार नहीं करना पड़ेगी।

एक सिख था जिसको पागलखाने में दाखिल हुए पंद्रह बरस हो चुके थे। हर वक़्त उसकी ज़बान से ये अजीब-ओ-गरीब अल्फ़ाज़ सुनने में आते थे, “ओपड़ दी गुड़ गुड़ दी अनैक्स दी बे ध्याना दी मंग दी दाल उफ़ दी लालटैन।” देखता था रात को। पहरदारों का ये कहना था कि पंद्रह बरस के तवील अर्से में वो एक लहज़े के लिए भी नहीं सोया। लेटा भी नहीं था। अलबत्ता कभी कभी किसी दीवार के साथ टेक लगा लेता था।

हर वक़्त खड़ा रहने से उसके पांव सूज गए थे। पिंडलियां भी फूल गई थीं, मगर उस जिस्मानी तकलीफ़ के बावजूद लेट कर आराम नहीं करता था। हिंदोस्तान, पाकिस्तान और पागलों के तबादले के मुतअल्लिक़ जब कभी पागलखाने में गुफ्तुगू होती थी वो ग़ौर से सुनता था। कोई उससे पूछता था कि उसका क्या ख़याल है तो वो बड़ी संजीदगी से जवाब देता, “ओपड़ दी गुड़ गुड़ दी अनैक्स दी बे ध्याना दी मंग दी वाल ऑफ़ दी पाकिस्तान गर्वनमैट।”

लेकिन बाद में “ऑफ़ दी पाकिस्तान गर्वनमैट” की जगह “ऑफ़ दी टोबा टेक सिंह गर्वनमैट” ने ले ली और उसने दूसरे पागलों से पूछना शुरू किया कि टोबाटेक सिंह कहाँ है, जहाँ का वो रहने वाला है। लेकिन किसी को भी मालूम नहीं था कि वो पाकिस्तान में है या हिंदोस्तान में। जो बताने की कोशिश करते थे, खुद इस उलझाव में गिरफ़्तार हो जाते थे कि सियालकोट पहले हिंदोस्तान में होता था पर अब सुना है कि पाकिस्तान में है।

क्या पता है कि लाहौर जो अब पाकिस्तान में है कल हिंदोस्तान में चला जाये या सारा हिंदोस्तान ही पाकिस्तान बन जाये और ये भी कौन सीने पर हाथ रख कर कह सकता था कि हिंदोस्तान और पाकिस्तान दोनों किसी दिन सिरे से गायब ही हो जाएं।

उस सिख पागल के केस छिदरे हो कर बहुत मुख़्तसर रह गए थे। चूँकि बहुत कम नहाता था, इसलिए दाढ़ी और सर के बाल आपस में जम गए थे, जिसके बाइस उसकी शक्ल बड़ी भयानक हो गई थी। मगर आदमी बेज़रर था। पंद्रह बरसों में उसने कभी किसी से झगड़ा फ़साद नहीं किया था। पागलखाने के जो पुराने मुलाज़िम थे, वो उसके मुतअल्लिक़ जानते थे कि टोबाटेक सिंह में उसकी कई ज़मीनें थीं। अच्छा खाता-पीता ज़मींदार था कि अचानक दिमाग़ उलट गया।

उसके रिश्तेदार लोहे की मोटी-मोटी जंजीरों में उसे बांध कर लाए और पागलखाने में दाखिल करा गए।

महीने में एक बार मुलाक़ात के लिए ये लोग आते थे और उसकी ख़ैर-ख़ैरियत दरयाफ़्त कर के चले जाते थे। एक मुद्दत तक ये सिलसिला जारी रहा। पर जब पाकिस्तान, हिंदोस्तान की गड़बड़ शुरू हुई तो उनका आना बंद हो गया।

उसका नाम बिशन सिंह था मगर उसे टोबाटेक सिंह कहते थे। उसको ये क़तअन मालूम नहीं था कि दिन कौन सा है, महीना कौन सा है या कितने साल बीत चुके हैं। लेकिन हर महीने जब उसके अज़ीज़-ओ-अक़ारिब उससे मिलने के लिए आते थे तो उसे अपने आप पता चल जाता था। चुनांचे वो दफ़्तरदार से कहता कि उसकी मुलाक़ात आ रही है।

उस दिन वो अच्छी तरह नहाता, बदन पर ख़ूब साबुन घिसता और सर में तेल लगा कर कंधा करता, अपने कपड़े जो वो कभी इस्तेमाल नहीं करता था, निकलवा के पहनता और यूँ सज कर मिलने वालों के पास जाता। वो उससे कुछ पूछते तो वो ख़ामोश रहता या कभी कभार “ऊपर दी गुड़ गुड़ दी अनैक्स दी बे ध्याना दी मंग दी वाल ऑफ़ दी लालटैन” कह देता।

उसकी एक लड़की थी जो हर महीने एक उंगली बढ़ती-बढ़ती पंद्रह बरसों में जवान हो गई थी। बिशन सिंह उसको पहचानता ही नहीं था। वो बच्ची थी जब भी अपने बाप को देख कर रोती थी, जवान हुई तब भी उसकी आँखों से आँसू बहते थे।

पाकिस्तान और हिंदोस्तान का क्रिस्सा शुरू हुआ तो उसने दूसरे पागलों से पूछना शुरू किया कि टोबाटेक सिंह कहाँ है। जब इत्मिनानबख़्श जवाब न मिला तो उसकी कुरेद दिन-ब-दिन बढ़ती गई। अब मुलाक़ात भी नहीं आती थी। पहले तो उसे अपने आप पता चल जाता था कि मिलने वाले आ रहे हैं, पर अब जैसे उसके दिल की आवाज़ भी बंद हो गई थी जो उसे उनकी आमद की ख़बर दे दिया करती थी।

उसकी बड़ी ख़्वाहिश थी कि वो लोग आएँ जो उससे हमदर्दी का इज़हार करते थे और उसके लिए फल, मिठाईयाँ और कपड़े लाते थे। वो अगर उनसे पूछता कि टोबाटेक सिंह कहाँ है, तो वो उसे यक़ीनन बता देते कि पाकिस्तान में है या हिंदोस्तान में क्योंकि उसका ख़याल था कि वो टोबाटेक सिंह ही से आते हैं, जहाँ उसकी ज़मीनें हैं।

पागलखाने में एक पागल ऐसा भी था जो खुद को खुदा कहता था। उससे जब एक रोज़ बिशन सिंह ने पूछा कि टोबाटेक सिंह पाकिस्तान में है या हिंदोस्तान में तो उसने हस्ब-ए-आदत क़हक़हा लगाया और कहा, वो पाकिस्तान में है न हिंदोस्तान में। इसलिए कि हमने अभी तक हुक्म नहीं दिया।

बिशन सिंह ने उस खुदा से कई मर्तबा मिन्नत-समाजत से कहा कि वो हुक्म देदे ताकि इंज़ट ख़त्म हो, मगर वो बहुत मसरूफ़ था इसलिए कि उसे और बेशुमार हुक्म देने थे। एक दिन तंग आ कर वो उस पर बरस पड़ा, “ओपड़ दी गुड़ गुड़ दी अनैक्स दी बे ध्याना दी मंग दी दाल ऑफ़ वाहे गुरू जी दा ख़ालिसा ऐंड वाहे गूरूजी की फ़तह... जो बोले सो निहाल, सत सिरी अकाल।”

उसका शायद ये मतलब था कि तुम मुसलमान के खुदा हो... सिखों के खुदा होते तो ज़रूर मेरी सुनते।

तबादले से कुछ दिन पहले टोबाटेक सिंह का एक मुसलमान जो उसका दोस्त था, मुलाक़ात के लिए आया। पहले वो कभी नहीं आया था। जब बिशन सिंह ने उसे देखा तो एक तरफ़ हट गया और वापस जाने लगा, मगर सिपाहियों ने उसे रोका, “ये तुम से मिलने आया है... तुम्हारा दोस्त फ़ज़लदीन है।”

बिशन सिंह ने फ़ज़लदीन को एक नज़र देखा और कुछ बड़बड़ाने लगा। फ़ज़लदीन ने आगे बढ़ कर उसके कंधे पर हाथ रखा, “मैं बहुत दिनों से सोच रहा था कि तुम से मिलूं लेकिन फ़ुर्सत ही न मिली... तुम्हारे सब आदमी ख़ैरियत से हिंदोस्तान चले गए... मुझसे जितनी मदद हो सकी, मैंने की... तुम्हारी बेटी रूप कौर...”

वो कुछ कहते कहते रुक गया। बिशन सिंह कुछ याद करने लगा, “बेटी रूप कौर!”

फ़ज़लदीन ने रुक रुक कर कहा, “हाँ... वो... वो भी ठीक ठाक है... उनके साथ ही चली गई।”

बिशन सिंह ख़ामोश रहा। फ़ज़लदीन ने कहना शुरू किया, उन्होंने मुझसे कहा था कि तुम्हारी ख़ैर ख़ैरियत पूछता रहूं... अब मैंने सुना है कि तुम हिंदोस्तान जा रहे हो... भाई बलबीर सिंह और भाई वधावा सिंह से मेरा सलाम कहना... और बहन अमृत कौर से भी...

“भाई बलबीर से कहना फ़ज़लदीन राज़ी ख़ुशी है... दो भूरी भैंसें जो वो छोड़ गए थे, उनमें से एक ने कट्टा दिया है और दूसरी के कट्टी हुई थी पर वो छः दिन की हो के मर गई... और मेरे



लायक़ जो ख़िदमत हो कहना, मैं हर वक़्त तैयार हूँ... और ये तुम्हारे लिए थोड़े से मरोंडे लाया हूँ।”

बिशन सिंह ने मरोंडों की पोटली ले कर पास खड़े सिपाही के हवाले कर दी और फ़ज़लदीन से पूछा, “टोबाटेक सिंह कहाँ है?”

फ़ज़लदीन ने क़दरे हैरत से कहा, “कहाँ है... वहीं है जहाँ था।”

बिशन सिंह ने फिर पूछा, “पाकिस्तान में या हिंदोस्तान में?”

“हिंदोस्तान में... नहीं नहीं, पाकिस्तान में।” फ़ज़लदीन बौखला सा गया।

बिशन सिंह बड़बड़ाता हुआ चला गया, “ओपड़ दी गुड़ गुड़ दी अनैक्स दी बे ध्याना दी मंग दी दाल ऑफ़ पाकिस्तान ऐंड हिंदोस्तान आफ़ दी दुरफ़टे मुँह।”

तबादले की तैयारियां मुकम्मल हो चुकी थीं। इधर से उधर और उधर से इधर आने वाले पागलों की फ़हरिस्ते पहुंच गई थीं और तबादले का दिन भी मुक़र्रर हो चुका था।

सख़्त सर्दियां थीं, जब लाहौर के पागलखाने से हिंदू-सिख पागलों से भरी हुई लारियां पुलिस के मुहाफ़िज़ दस्ते के साथ रवाना हुईं। मुतअल्लिका अफ़सर भी हमराह थे। वाघा के बॉर्डर पर तरफ़ैन के सुपरिन्टेन्डेन्ट एक दूसरे से मिले और इब्तिदाई कार्रवाई ख़त्म होने के बाद तबादला शुरू हो गया जो रात भर जारी रहा।

पागलों को लारियों से निकालना और उनको दूसरे अफ़सरों के हवाले करना बड़ा कठिन काम था। बा'ज़ तो बाहर निकलते ही नहीं थे। जो निकलने पर रज़ामंद हुए थे, उनको सँभालना मुश्किल हो जाता था क्योंकि इधर-उधर भाग उठते थे, जो नंगे थे, उनको कपड़े पहनाए जाते वो फाड़ कर अपने तन से जुदा कर देते। कोई गालियां बक रहा है। कोई गा रहा है। आपस में लड़ झगड़ रहे हैं। रो रहे हैं, बिलक रहे हैं। कान पड़ी आवाज़ सुनाई नहीं देती थी... पागल औरतों का शोर-ओ-गोगा अलग था और सर्दी इतनी कड़ाके की थी कि दाँत से दाँत बज रहे थे।

पागलों की अक्सरियत इस तबादले के हक़ में नहीं थी, इसलिए कि उनकी समझ में नहीं आता था कि उन्हें अपनी जगह से उखाड़ कर यहाँ फेंका जा रहा है। वो चंद जो कुछ सोच समझ सकते थे, पाकिस्तान ज़िंदाबाद और पाकिस्तान मुर्दाबाद के नारे लगा रहे थे। दो तीन

मर्तबा फ़साद होते होते बचा क्योंकि बा'ज़ मुसलमानों और सिखों को ये नारा सुन कर तैश आ गया था।

जब बिशन सिंह की बारी आई और वाघा के उस पार मुतअल्लिका अफ़सर उसका नाम रजिस्टर में दर्ज करने लगा तो उसने पूछा, “टोबाटेक सिंह कहाँ है... पाकिस्तान में या हिंदोस्तान में?”

मुतअल्लिका अफ़सर हंसा, “पाकिस्तान में।”

ये सुन कर बिशन सिंह उछल कर एक तरफ़ हटा और दौड़ कर अपने बाक़ी-मांदा साथियों के पास पहुंच गया।

पाकिस्तानी सिपाहियों ने उसे पकड़ लिया और दूसरी तरफ़ ले जाने लगे, मगर उसने चलने से इनकार कर दिया: “टोबाटेक सिंह यहां है...” और ज़ोर ज़ोर से चिल्लाने लगा, “ओपड़ दी गुड़ गुड़ दी अनैक्स दी बे ध्याना दी मंग दी दाल ऑफ़ टोबाटेक सिंह ऐंड पाकिस्तान।”

उसे बहुत समझाया गया कि देखो अब टोबाटेक सिंह हिंदोस्तान में चला गया है... अगर नहीं गया तो उसे फ़ौरन वहां भेज दिया जाएगा, मगर वो न माना। जब उसको ज़बरदस्ती दूसरी तरफ़ ले जाने की कोशिश की गई तो वो दरमियान में एक जगह इस अंदाज़ में अपनी सूजी हुई टांगों पर खड़ा हो गया जैसे अब उसे कोई ताक़त वहां से नहीं हिला सकेगी।

आदमी चूँकि बेज़रर था इसलिए उससे मज़ीद ज़बरदस्ती न की गई। उसको वहीं खड़ा रहने दिया गया और तबादले का बाक़ी काम होता रहा।

सूरज निकलने से पहले साकित-ओ-सामित बिशन सिंह के हलक़ से एक फ़लक-शिगाफ़ चीख़ निकली... इधर उधर से कई अफ़सर दौड़े आए और देखा कि वो आदमी जो पंद्रह बरस तक दिन-रात अपनी टांगों पर खड़ा रहा था, औंधे मुँह लेटा है। उधर ख़ारदार तारों के पीछे हिंदोस्तान था... इधर वैसे ही तारों के पीछे पाकिस्तान। दरमियान में ज़मीन के उस टुकड़े पर जिसका कोई नाम नहीं था, टोबाटेक सिंह पड़ा था।